

विज्ञापनों में मनोरंजन की महक

पवित्र श्रीवास्तव*

सदियों से हमारे समाज में एक सिद्धांत प्रचलित है कि आवश्यकता आविष्कार की जननी होती है। अर्थात् हमारा समाज जिस चीज की आवश्यकता महसूस करता है, समय के साथ उसका आविष्कार हो जाता है। इसके विपरीत आज बाजारीकृत व्यवस्था ने अनेकानेक उत्पाद और सेवाओं का आविष्कार किया है और विज्ञापन हमें उस वस्तु या सेवा की आवश्यकता महसूस कराते हैं। बाजार का यही नवीन सिद्धांत हमें विज्ञापन की महत्ता से परिचित कराता है। पिछले दशकों में तेजी से फैला यह विज्ञापन उद्योग आज चौबीस हजार करोड़ से अधिक का हो गया है। एक अनुमान के अनुसार बड़े शहरों में एक व्यक्ति प्रतिदिन सात हजार से अधिक विज्ञापनों पर चाहे-अनचाहे नजर दौड़ाता है। खाने-पीने की वस्तुओं से लेकर वित्त एवं बीमा संबंधी सेवाओं तक, वाहनों और संचार सेवाओं की जानकारी से लेकर सामाजिक सेवा संदेशों तक सभी में विज्ञापनों की भरमार है। विज्ञापन आज किसी वस्तु या सेवा की जानकारी देते हुए उसकी गुणवत्ता या महत्ता से परिचय ही नहीं कराते हैं बल्कि हमारा मनोरंजन भी करते हैं। हमें आज भी याद है कि 80 के दशक में दूरदर्शन पर सस्ते वार्शिंग पाउडर में प्रतिस्पर्धा में सर्फ की ललिता जी 'सर्फ की खरीददारी में ही समझदारी है भाईसाहब' कहकर सर्फ का प्रचार तो करती ही थी, साथ ही हमारा मनोरंजन भी करती थी। झरने के नीचे नहाती लिरिल गर्ल, लक्स की ब्रॉड एम्बेसेडर फिल्मी तारिकार्यें, वीआईपी सूटकेस, गोदरेज अलमारी और केडबरी चाकलेट के विज्ञापनों दिखाये गये मध्यमवर्गीय परिवारों ने सर्फ उत्पाद का प्रचार कर उसे सफल नहीं बनाया बल्कि हमारा जोरदार मनोरंजन भी किया। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि आज विज्ञापन वस्तु या सेवा की जानकारी हासिल करने के लिए नहीं बल्कि मनोरंजन के लिए देखे जाते हैं।

विज्ञापन और मनोरंजन का अर्थशास्त्र

आज विज्ञापन विशेषज्ञ यह मान रहे हैं कि विज्ञापनों में विक्रय तत्व से ज्यादा मनोरंजन तत्व पर ध्यान दिया जाता है। यदि विज्ञापन लोगों का मनोरंजन कर रहा है तो उत्पाद अपने आप ही सफल हो जाता है। वर्तमान परिदृश्य में मनोरंजन तत्व की ओर तेजी से बढ़ते सामाजिक झुकाव को देखकर प्राइस वाटर कूपर्स रिपोर्ट सही साबित होती प्रतीत है जिसमें कहा गया है कि भारत में मीडिया और मनोरंजन बाजार वर्ष 2012 तक लगभग 18.5 प्रतिशत विकास दर के साथ 1,548 अरब रुपये तक पहुँचने की उम्मीद है। मनोरंजन उद्योग के संबंध में हाल में प्रकाशित एसौचेम रिपोर्ट में गया गया है कि वर्ष 2010 में मीडिया एवं मनोरंजन उद्योग 19 प्रतिशत की में विकास दर के साथ 83,740 करोड़ का होगा। जिसमें विभिन्न

माध्यमों की भागीदारी अनुसार टेलीविजन उद्योग 42,700 करोड़, प्रिंट मीडिया 19,900 करोड़, सिनेमा 15,300 करोड़ और म्यूजिक 740 करोड़ का होगा। इसके अतिरिक्त एनीमेशन एवं गेमिंग के क्षेत्र में अपार संभावनाएं देखी जा रही हैं। उक्त आँकड़े साफ करते हैं कि मनोरंजन उद्योग में वृद्धि से विज्ञापन उद्योग का विस्तार संभव होगा। विज्ञापनों पर व्यय करने वाली संस्थाएँ विज्ञापन एजेन्सी पर दबाव डालेंगी की विज्ञापनों पर किये गये व्यय का हमें उचित प्रतिफल मिलना चाहिये। विज्ञापन विशेषज्ञों की राय में यह तभी संभव होगा जब विज्ञापनों में मनोरंजन परोसा जाये।

आधुनिक अर्थव्यवस्था में विकास के स्तर का मापने के लिए यह अध्ययन भी किया जाता है कि विज्ञापन पर किया गया खर्च सकल घरेलू उत्पाद का कितने प्रतिशत है। भारत में यह आँकड़ा अभी दशमल चार प्रतिशत के आसपास है। आने वाले पाँच वर्षों में संभवतः यह एक प्रतिशत के स्तर तक पहुँच जाये। जर्मनी के मामले में यह आँकड़ा 9 प्रतिशत है। जिन देशों में विज्ञापन पर ज्यादा व्यय किया जाता है वहाँ प्रसिद्ध ब्राण्ड विकसित हुए हैं। कोक, पेप्सी, मेकडोनाल्ड जैसे विश्व प्रसिद्ध ब्राण्ड अमेरिका के हैं क्योंकि वहाँ विज्ञापनों पर अधिक व्यय किया जाता है।

विज्ञापनों में मनोरंजन की धुलती मिठास

भारत के प्रख्यात विज्ञापन विशेषज्ञ पीयूष पाण्डे कहते हैं कि आज विज्ञापन उत्पाद से ज्यादा, उसके लिए सृजित मनोरंजक विचार के लिए जाना जाता है। इसलिए दर्शकों की रुचि बनाये रखने के लिए देश के बेहतरीन विज्ञापन भरतमुनि के नाट्य शास्त्र के नवरस से प्रेरित होने लगे हैं। आज तीस सेकेण्ड का विज्ञापन मनोरंजन के मामले में तीन घंटे की फिल्म पर भारी पड़ता है। अमेरिका के प्रख्यात पत्रकार वांस पैकार्ड ने अपनी पुस्तक 'द हिडन पर्सुएडर्स' में विस्तार से स्पष्ट किया कि किस-किस तरह उपभोक्ताओं के मानस को प्रभावित किया जा सकता है। आज विज्ञापन को मनोरंजक और प्रभावी बनाने के लिए नये-नये नुस्खे, नयी-नयी तकनीक अपनायी जा रही है। हास्य-व्यंग्य, भावनाओं और संवेदनाओं से लेकर एनीमेशन एवं कार्टून सभी का प्रयोग किया जा रहा है। अमिताभ बच्चन सिनेमा की तरह विज्ञापनों में भी छाये हुए हैं। वे नवरत्न तेल से लेकर, बच्चों को पोलियो की दवा पिलाने तक, सब जगह नजर आते हैं। इसके साथ-साथ शाहरुख खान, सचिन तेंदुलकर, आमिर खान और मेहन्द्र सिंह धोनी विज्ञापनों में तरह तरह का भेष धारण कर वस्तुओं का प्रचार ही नहीं करते बल्कि लोगों का मनोरंजन भी करते हैं। नामचीन हस्तियों को छोड़ दे तो भी टाटा टी के 'जागो इंडिया रे' मेन्टॉस का

*विभागाध्यक्ष, जनसम्पर्क विभाग, माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय

‘दिमाग की बत्ती जला दें’ तथा वोडाफोन के ‘जूजू’ जैसे विज्ञापन लोगों का जबरदस्त मनोरंजक करते हैं।

आईपीएल के दूसरे सत्र में मई 2009 में प्रसारित हुए वोडाफोन के जूजू के 29 विज्ञापनों की श्रृंखला ने लोगों को अपनी ओर आकर्षित किया। इस विज्ञापन अभियान की लोगों ने बड़ा पसंद किया जिससे वोडाफोन को बड़ी व्यावसायिक सफलता मिली। इसी कड़ी में केडबरीज का ‘पप्पू पास हो गया’ कोका कोला का ‘ठंडा मतलब कोका कोला’ और एशियन पेट्स का ‘वाह, सुनील बाबू बढ़िया है’ विज्ञापन अभियान भी उल्लेखनीय है। विज्ञापनों में मनोरंजन एवं सृजनात्मकता दृष्टि से अमूल के ‘अटर्ली-बटर्ली’ विज्ञापन अभियान का जिक्र किया जाना भी जरूरी है। 1967 में अमूल ब्राण्ड के साथ ‘सिलिल्वस्टर द कुन्हा’ की अमूल गर्ल नजर आयी और फिर हमेशा के लिए ब्राण्ड की पहचान बन गई। इस विज्ञापन अभियान की सफलता का अंदाज इसी बात से लगाया जा सकता है कि गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकार्ड ने इसे सबसे लम्बे समय तक चलने वाले विज्ञापन अभियान के रूप में दर्ज किया है। लम्बे समय तक विज्ञापन विशेषज्ञ यह मानते रहे कि जैसे-जैसे किसी वस्तु पर होने वाले विज्ञापन खर्च में बढ़ोतरी होती जाती है वस्तु ब्राण्ड में तब्दील होने लगती है। इस मान्यता के विपरीत आज विज्ञापन विशेषज्ञों की राय है कि किसी वस्तु का विज्ञापन लोगों का जितना अधिक मनोरंजन करेगा उतनी तेजी से वस्तु ब्राण्ड में तब्दील होती जायेगी।

विज्ञापन मनोरंजन और बच्चे

बच्चों के लिए विज्ञापन सर्वाधिक आकर्षण का केन्द्र होते हैं। छोटे-छोटे बच्चों को टकटकी लगाये टीवी पर विज्ञापन देखकर खुश होते देखने का किस्सा हर परिवार से सुना जा सकता है। बच्चे विज्ञापनों को पसंद तो करते हैं साथ ही वे विज्ञापन का अहम् हिस्सा भी हो गये हैं। आज नारी और बच्चों की शामिल कर ही अधिकांश विज्ञापन बनाये जा रहे हैं।

भारत के केवल टेलीविजन के शुरुआती दौर में नमिता उन्नीकृष्णन और शैलजा बाजपेयी ने ‘द इंपैक्ट ऑफ टेलीविजन एडवर्टाईजिंग ऑन चिल्डन’ शीर्षक से एक अध्ययन किया था जो 1996 में सेज प्रकाशन ने प्रकाशित किया। यह अध्ययन दिल्ली में किये गये सर्वेक्षण पर आधारित था। सर्वेक्षण के अनुसार 1992 में टेलीविजन में आने वाले 35 प्रतिशत उपभोक्ता विज्ञापनों में बच्चों का प्रयोग किया जा रहा था। अध्ययन में एक निष्कर्ष के अनुसार आठ से पन्द्रह साल के पचहत्तर प्रतिशत बच्चे टेलीविजन विज्ञापनों में प्रदर्शित उत्पादों को हासिल करना चाहते हैं। बरसों पहले संयुक्त राज्य अमेरिका में कोका कोला कंपनी ने अपने उत्पाद के साथ एक फीडिंग बोतल मुफ्त देना शुरू किया। फीडिंग बोतल की बनावट बिलकुल कोकाकोला की बोतल जैसी थी। यह प्रयोग मनोविज्ञान के उस सिद्धांत पर आधारित था जिसमें कहा गया है कि बच्चे के अवचेतन मन में अधिक समय तक देखी गयी चीज बैठ जाती है।

आज ‘कमर्शिलाइजेशन ऑफ चाइल्ड’ समाज की चिंता का बड़ा विषय है। एक सर्वे के अनुसार ब्रिटेन में 10 वर्ष की औसत आयु बच्चे दस हजार से अधिक टीवी विज्ञापन देखते हैं एवं चार सौ से अधिक ब्राण्ड याद रखते हैं, और इनमें से ही अपनी पसंद की वस्तु चुनते हैं। वे उन चीजों को अधिक चुनते जिनके विज्ञापन अधिक ग्राह्य होते हैं। इस तथ्य को भारत की दो बिस्कुट निर्माता कंपनी की विज्ञापन रणनीति के आधार पर समझा जा सकता है। 90 के दशक में ‘पारले प्रॉडक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड’ के ‘पारले जी’ बिस्कुट को ब्रिटेनिया के ‘टाईगर’ बिस्कुट ने अपने विज्ञापनों से कड़ी चुनौती दी। उस समय पारले ने अपनी विज्ञापन रणनीति को परिवर्तित करते हुए दूरदर्शन में बच्चों के चर्चित धारावाहिक ‘शक्तिमान’ को प्रायोजित किया और ‘शक्तिमान’ को पारले के विज्ञापन में शामिल कर पुनः अपने ब्राण्ड को बाजार में स्थापित कर लिया। सभी राष्ट्रीय व बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ बच्चों को केन्द्र में रखकर अपने उत्पाद बना रही हैं। ये कंपनियाँ आज इन वस्तुओं के विज्ञापन बच्चों के टेलीविजन चैनल्स या कार्टून पत्रिकाओं में करती हैं। बच्चों के पसंदीदा पात्र इन वस्तुओं के विज्ञापनों में नजर आते हैं इसलिए आज बच्चों में इन वस्तुओं को खरीदने की एक होड़ सी देखने को मिल रही है। यह कमाल वस्तु की गुणवत्ता या उसकी जरूरत के कारण नहीं हो रहा है बल्कि उस उत्पाद के विज्ञापनों के डाले गये मनोरंजन के मसाले का कमाल है।

विज्ञापनों में मनोरंजन के नये जतन

आज विज्ञापन एजेन्सियाँ किसी वस्तु या सेवा के विज्ञापनों को मनोरंजक व प्रभावी बनाने के लिए नये नये जतन कर रही हैं। मेन्टॉस, सेन्टर शॉक्स या कुरकरे में की गयी हास्य अपील हो अथवा अमूल माचो या एक्स इफेक्ट्स में की गयी सेक्स अपील, बीमा कंपनियों अथवा मोबाइल कंपनियों द्वारा की गयी भावनात्मक अपील हो या टाटा टी के ‘जागो रे’, आइडिया के ‘पेड़ एवं पेपर बचाओ’ दिखाने वाले सामाजिक जागरूकता के विज्ञापन, सभी का मकसद बेहतर मनोरंजन कर लोगों का दिल कि जीतना है। उपभोक्ता का दिल जीतते से ही उत्पाद विजयी होगा। ये सारे विज्ञापन हमारे आस-पास के सामाजिक ताने-बाने में गुंथे हुए नजर आ रहे हैं। जहाँ एक ओर अनेक कंपनियाँ ब्राण्ड एम्बेसेडर को लेकर बाजार में अपनी पहचान बनाने में लगी है वही ‘हार्पिक’ एवं ‘व्हील’ के विज्ञापन आम आदमी के बीच जाकर कुछ नया करने की कोशिश कर रहे हैं। कुल मिलाकर आज सारा विज्ञापन तंत्र समाज और मनोरंजन को केन्द्र में रखकर कुछ नया करने का जतन करने में लगा है। एक समाजशास्त्री का बयान है कि किसी दौर के समाज और उस, समय के मनोरंजन को समझना हो तो उस दौर में उस समाज में चल रहे चुटकुलों को समझना चाहिये। आज विज्ञापनों के बढ़ते मायाजाल को देखकर हम कह सकते हैं कि किसी दौर के सामाजिक मनोरंजन को समझने के लिए उस समाज के लिए उस दौर में बने विज्ञापनों की देखना चाहिये।